धान के प्रमुख रोगों की पहचान एवं समेकित प्रबंधन

डा0 आर0पी0 सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष
महायोगी गोरखनाथ कृषि विज्ञान केंद्र, चौकमाफी, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

धान हमारे देश की एक मुख्य फसल है। धान की उपज को क्षति पहुंचाने वाले कारणों में रोगों का प्रमुख स्थान है। यद्यपि धान की उपलब्धता प्रजातियों की उपज क्षमता अच्छी है फिर भी बहुत से रोगों के कारण औसतन लगभग 90 प्रतिशत उपज में कमी पायी गयी है जो कि रोग की गम्भीर अवस्था में 50–90 प्रतिशत हो सकती है। अभी तक रोगों की समस्याओं से निपटने के लिए सिर्फ रसायनों का ही प्रयोग होता रहा है। यह रसायन मंहगें होने के साथ–साथ वातावरण को प्रदूषित भी करते हैं। मनुष्य एवं पशु आहार में हानिकारक एवं विशैले रसायनों के अवशेष पहुंच रहे हैं तथा साथ ही पौधों को स्वस्थ बनाये रखने वाले मित्र कीटाणुओं की संख्या लगातार कम होती जा रही है और हानिकारक जीवों में इन रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता होती जा रही है। जिससे मिलने वाला प्रतिफल भी घटने लगा है। इन सभी समस्याओं के प्रभावी निदान एवं खतरों से बचने के लिए किसान भाइयों को धान की फसल में एकीकृत प्रबन्धन विषय पर जागृति लाने की आवश्यकता है। जिससे वह बीमारियों का सही ढंग से पहचान कर सके एवं उनकी रोकथाम के लिए उचित कदम उठा सके। पूर्वी उत्तर प्रदेश में पायी जाने वाली प्रमुख बीमारियों के लक्षण एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन निम्न प्रकार करना चाहिए।

(1) बीज एवं पौध रोगः

धान की कुछ बीमारियां बीजजनित होती है जो भण्डारण में ही बीज में सड़न पैदा करती है तथा बुआई करने के बाद अंकुरण हो जाने पर जड़ सड़न होती है जिससे पौध कमजोर एवं छोटी रह जाती है तथा धान के उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

बीज सड़न एवं पौध झुलसा रोग

प्रबंधन :

स्वच्छ एवं प्रमाणित बीज बोना चाहिए। बीज बोने से पहले बीज शोधन कैप्टान/थीरम/विटावैक्स पॉवर/कार्बेण्डाजीम की 2 ग्राम मात्रा/किग्रा0 बीज दर से करना चाहिए। स्यूडोमोनॉस ल्यूरोसेन्स पाउडर की 20 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर जड़ उपचार रोपाई से एक घण्टे पहले करना चाहिए।

(2) पत्तियों के रोगः

(क) धान का झुलसा रोग– इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों पर दिखायी पड़ते हैं लेकिन इसका प्रकोप पर्णद्वद, पुष्पक्रम, गांठों एवं दानों के छिलको पर भी होता है। रोग के प्रारम्भ की अवस्था में पौधे की निचली पत्तियों पर हल्के बैगनी रंग के धब्बे बनते हैं जो धीरे–धीरे बढ़कर आंख के आकार के हो जाते हैं। इन धब्बों के बीच का रंग राख के रंग का व परिधि गहरे भूरे रंग की हो जाती है। पुष्पपुज के निचले ठण्डक में घूसर बादामी रंग के धब्बे पड़ने से वहां सड़न पैदा हो जाती है जिसे 'ग्रीवा विगलन' कहा जाता है। इस रोग में दाने हल्के पड़ते है।

झुलसा रोग के लक्षण

प्रबंधन :

खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें। रोग अवरोधी व सहनशील प्रजातियों का चयन करना चाहिए। संतुलित मात्रा में नत्रजन युक्त खाद का प्रयोग करें। खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें तथा रोगग्रसित पौध अवशेषों को नष्ट कर दें। तुलसी के पत्ते की 250 ग्राम सत को 10 लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 3–4 छिड़काव 7–10 दिनों के अन्तराल पर करें, ध्यान रहे कि प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रयोग करना चाहिए। बीज शोधन

कैप्टान/थीरम/विटावैक्स पॉवर/कार्बेण्डाजीम की 2 ग्राम मात्रा/किग्रा0 बीज दर से करना चाहिए। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखायी देने पर **(कल्ले निकलते समय आर्थिक हानि स्तर 3–5 घावों/पत्ती तथा 2–5 गर्दन प्रभावित पौध/मी^{2})** 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर ट्राईसाइक्लोजोल 75 प्रतिशत डब्ल्यू0 पी0 की 1 ग्राम/लीटर पानी अथवा टेबूकोनोजोल + ट्राईफ्लोक्सीस्ट्रोबिन (नाटिवो) की 1 ग्राम/2.5 ली0 पानी या कासुगामाईसिन 3 प्रतिशत एस0एल0 या हिनोसान 50 प्रतिशत ई0सी0 या आई0बी0पी0 48 प्रतिशत ई0सी0 या टेबूकोनोजोल 25.9 प्रतिशत ई0सी0 की 1 मिली0/लीटर पानी या आईप्रेडियान 50 प्रतिशत डब्ल्यू0 की 2 ग्राम/ली0 पानी या मेटिराम 70 प्रतिशत डब्ल्यू0जी0 की 4 ग्राम/ली0 पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

(ख) भूरा धब्बा रोग– इस रोग के प्रमुख लक्षण पत्तियों एवं बालियों पर दिखयी पड़ते है। प्रभावित भागों पर अण्डाकार गहरे से भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। प्रायः इन धब्बों के चारों ओर पीलापन लिए गन्दा सफेद या धूसर रंग का वृत्त दिखयी देता है। जो इस रोग की एक खास पहचान है। बाद में इन धब्बों का रंग गहरा भूरा हो जाता है। कई धब्बे आपस में मिलकर पत्तियों को सुखा देते हैं। दानों के ऊपर एवं ठूड़ पर छोटे–छोटे काले रंग के धब्बे बनते हैं। रोग की आक्रमकता बढ़ने पर बालियां स्वस्थ रूप से नहीं निकल पाती हैं।

भूरा धब्बा रोग के लक्षण

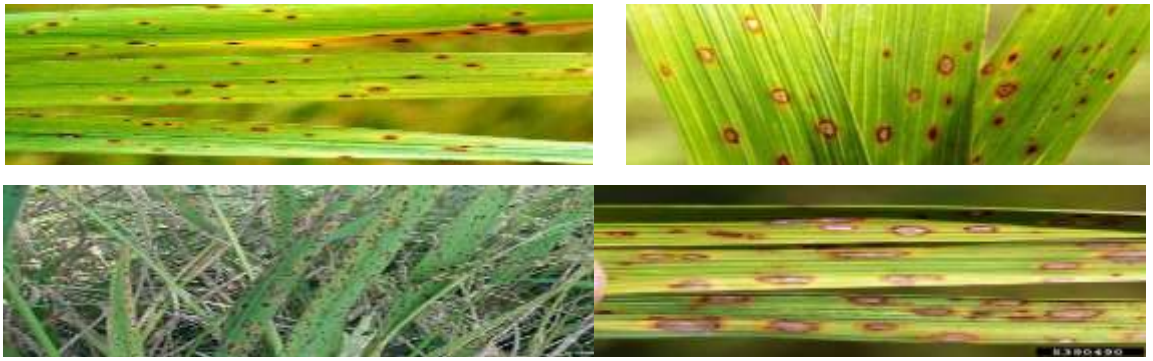

प्रबंधन :

रोग अवरोधी व सहनशील प्रजातियों का चयन करना चाहिए। संतुलित मात्रा में नत्रजन युक्त खाद का प्रयोग करें। खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें तथा रोगग्रसित पौध अवशेषों को नष्ट कर दें। बीज शोधन कैप्टान/थीरम/विटावैक्स पॉवर/कार्बेण्डाजीम की 2 ग्राम मात्रा/किग्रा0 बीज दर से करना चाहिए। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखायी देने पर (कल्ले निकलते समय आर्थिक हानि स्तर 2–3 धब्बे/पत्ती और बालियॉ निकलते समय 2–3 प्रभावित पौध/मी^{2}) 2–3

छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर हेक्साकोनोजोल 5 प्रतिशत ई0सी0 की 2 मिली0/पानी या मैंकोजेब 63 प्रतिशत + कार्बेण्डाजीम 12 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 (सिक्सर) की 1–1.5 ग्राम/लीटर पानी या हेक्साकोनाजोल 4 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0+जिनेब 68 प्रतिशत (अवतार) की 1 ग्राम/लीटर पानी या आईप्रेडियान 50 प्रतिशत डब्ल्यू0 की 2 ग्राम/ली0 पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) शीथ झुलसा रोग– इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों एवं पर्णच्छद पर हल्के भूरे, मटमैले या पुआल रंग की पट्टियों के रूप में दिखायी पड़ते हैं। उग्र अवस्था में तने के चारों और अनियमित आकार के गहरे भूरे, मटमैले धब्बे बनते हैं। रोगग्रस्त पौधों में दाने पूर्णरूप से नहीं भर पाते हैं जिससे पैदावार गम्भीर रूप से प्रभावित होती है।

शीथ झुलसा रोग के लक्षण

प्रबंधन :

रोग अवरोधी व सहनशील प्रजातियों का चयन करना चाहिए। खेत को खरपतवारों व पूर्ववर्ती रोग ग्रसित पौध अवशेषों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। बीज शोधन स्यूडोमोनॉस ल्यूरोसेन्स पाउडर की 10 ग्राम/किग्रा0 की दर से करें, तथा इसी दवा की 20 ग्राम/ली0 पानी की दर से जड़ उपचार रोपाई से एक घण्टे पहले करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखायी देने पर (कल्ले निकलते समय आर्थिक हानि स्तर 5–6 मिमी. लम्बवत धब्बे और 2–3 प्रभावित पौध/मी^{2}) प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई0सी0 की 1 मिली0/ली0 पानी या विटरटेनॉल 25 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 2 ग्राम/ली0 पानी या आइप्रोडियान 50 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 2 प्रतिशत/ली0 पानी या क्लोरोथैलोनील 75 प्रतिशत डब्ल्यू0 पी0 3 ग्राम/ली0 पानी या वैलिडामाईसिन 3 प्रतिशत एस0एल0 2.5 मिली0/ली0 पानी हेक्साकोनाजोल 5 प्रतिशत ई0सी0 2 मिली0/ली0 पानी या टेबुकोनाजोल 25.9 प्रतिशत ई0सी0 1 मिली0/ली0 पानी की दर से 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

(घ) शीथ सड़न रोग– प्रारम्भ में सीथ के ऊपर छोटे–छोटे चाकलेटी भूरे रंग के धब्बे दिखायी पड़ते हैं। यह धब्बे लगभग अण्डाकार से लेकर अनियमित आकार के होते हैं, रोग का प्रकोप अधिक होने पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बालियां निकलने की अवस्था में बालियों के चारों ओर बनते हैं जिससे बालियां पूर्णरूप से बाहर नहीं आ पाती है यदि कुछ भाग बाहर निकलता है तो उसमें दाने नहीं भरते है। रोग से ग्रसित बालियों में यदि दाने बनते भी हैं तो दानों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिससे उत्पादन के साथ–साथ गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

शीथ सडन रोग के लक्षण

प्रबंधन :

रोग अवरोधी व सहनशील तथा प्रमाणित प्रजातियों का चयन करना चाहिए। खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। रोग ग्रसित अवशेषों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। रोग के लक्षण दिखायी देने पर (कल्ले निकलते समय आर्थिक हानि स्तर 2–3 मिमी. के धब्बे और 3–5 प्रभावित पौध/मी^{2}) हेक्साकोनाजोल 5 प्रतिशत ई0सी0 2 मिली0/ली0 पानी या प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई0सी0 की या इडीफेनफॉस 50 प्रतिशत ई0सी0 1 मिली0/ली0 पानी की दर से 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

(ड.) जीवाणु झुलसा रोग– इस रोग में सबसे पहले पत्तियों के किनारे ऊपरी भाग पीला सा होने लगता है तथा इसका प्रसार एक या दोनों किनारों के सिरों से प्रारम्भ होकर निचले हिस्से की ओर तेजी से होने लगता है। फलतः पत्तियां मटमैले, पीले रंग की होकर सीथ तक सूख जाती है। रोगग्रसित पौध कमजोर हो जाते हैं उनमें कल्ले कम निकलते है। दाने पूरी तरह नहीं भरते हैं। इस रोग की दूसरी अवस्था म्लानि की है जिसे क्रिसक अवस्था भी कहा जाता है। इसमें ग्रसित पौधों की सबसे नयी पत्ती हल्के मटमैले रंग की होती है। पत्तियां आपस में लिपटकर तथा नीचे से झुलसकर पीली या भूरी हो जाती है और पूरा पौधा मर जाता है। इस रोग को

पहचानने का आसान तरीका यह है कि तने को यदि काटकर अंगूठे व अंगुली के बीच दबाएं तो उससे मटमैले रंग का एक चिपचिपा द्रव निकलता है जो जीवाणुओं का समूह होता है।

जीवाणु झुलसा रोग के लक्षण

प्रबंधन :

रोग अवरोधी व सहनशील प्रजातियों का चयन करना चाहिए। सन्तुलित मात्रा में नत्रजन युक्त खादों काप्रयोग करना चाहिए। खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें तथा रोग ग्रसित पौध अवशेषों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। बीज शोधन हेतु 4 ग्राम स्ट्रेप्टोसाईक्लिन या 40 ग्राम प्लान्टोमाईसिन + 45 लीटर पानी + 25 किग्रा0 बीज की दर से करें। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखायी देने पर (कल्ले निकलते समय आर्थिक क्षति स्तर 2–3 प्रभावित पत्तियॉ/मी^{2}) 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाईक्लिन या 65 ग्राम एग्रीमाईसिन + 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराईड + 800 लीटर पानी/हेक्टेयर की दर से 2–3 छिड़काव 10–12 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

(च) जीवाणु पर्णधारी रोग– इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों पर ही दिखयी देते हैं। सबसे पहले पत्तियों की नसों के बीच में बारीक जलसिक्त धरियां बनती है जो शुरू में तो गहरी हरी होती है तथा बाद में नारंगी–कत्थई रंग में बदल जाती है। प्रभावित धारियों को गौरपूर्वक देखने पर छोटी–छोटी पीले रंग के बूंदे दिखयी पड़ती है जो जीवाणुओं का समूह होती है। जीवाणुओं का यह समूह पत्तियों के दोनों सतहों पर पाया जाता है। रोग की उग्रता बढ़ने में धारियां आपस में मिलकर चकत्तों का रूप ले लेती हैं एवं पूरी पत्तियां समय से पहले सूख जाती है।

जीवाणु पर्णधारी रोग के लक्षण

प्रबंधन : जीवाणु झुलसा रोग प्रबंधन में उल्लिखित अनुसार करें।

(छ) खैरा रोग– खैरा रोग जस्ते की कमी के कारण होता है। इस रोग के लक्षण पौधशाला में तथा रोपाई के 2–3 सप्ताह के बाद छोटे–छोटे टुकड़ों में प्रकट होते हैं। रोगग्रस्त पौधों की बढ़वार रूक जाती है, पत्तियां पीली पड़ जाती है जिस पर बाद में कत्थई रंग के धब्बे बन जाते है। उपज में कमी रोग की व्यापकता पर निर्भर करती है।

खैरा रोग के लक्षण

प्रबंधन :

नर्सरी, सीधी बुवाई अथवा रोपाई के बाद एक सुरक्षात्मक छिड़काव 5 किग्रा0 जिंक सल्फेट + 20 किग्रा0 यूरिया + 1000 लीटर पानी की दर से घोल बनाकर/हेक्टेयर क्षेत्रफल में करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखाई देने पर इसी दवा का प्रयोग पुनः करें। खैरा रोग की रोकथाम के लिए पौधे की जड़ों को रोपाई से पहले 2 प्रतिशत जिंक आक्साइड के पानी के घोल में 1–2 मिनट तक उपचारित करें तथा रोग की सम्भावना को ध्यान में रखकर जिंक सल्फेट 20–25 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर की दर से उर्वरक के साथ प्रयोग करना चाहिए। यदि ऐसा करने के बाद खड़ी फसल में इस रोग के लक्षण दिखयी दें तो 5 किग्रा0 जिंक सल्फेट एवं 2–5 किग्रा0 बुझे हुए चूने को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

(ज) लौह तत्व कमी से रोग – लौह तत्व की कमी के लक्षण नर्सरी में अधिक दिखायी देते हैं। पत्तियों का हरा भाग समाप्त हो जाता है, यदि यह कमी लम्बे समय तक बनी रहती है, तो

पत्तियों का अग्र भाग मर जाता है और धीरे–धीरे पत्तियॉ सूख जाती हैं। कभी–कभी इसका प्रकोप रोपाई के बाद भी दिखयी देता है। इस रोग में नई पत्तियां सफेद रंग की निकलती हैं तथा बाद में फट जाती है। रोगग्रस्त पौधे कमजोर और बौने रह जाते हैं।

लौह तत्व कमी के लक्षण

प्रबंधन :

लौह तत्व की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 5 किग्रा0 फेरस सल्फेट + 20 किग्रा0 यूरिया + 1000 ली0 पानी की दर से घोल बनाकर/हेक्टेयर क्षेत्रफल में छिड़काव करना चाहिए।

(झ) टुंगरू विषाणु रोग : धान का हरा फुदका नामक कीट इस रोग का वाहक होता है। इसके प्रकोप से पत्तियॉ पीली अथवा नारंगी रंग में परिवर्तित हो जाती हैं। पौधे छोटे हो जाते हैं तथा कल्लों की संख्या कम हो जाती है।

टुंगरू विषाणु रोग के लक्षण

प्रबंधन : खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। संतुलित मात्रा में उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। इस रोग के लक्षण दिखायी देने पर (कल्ले निकलते समय 1 टुंगरू विषाणु रोग से प्रभावित पौध/मी^{2}) इथोफेनप्राक्स 10 प्रतिशत ई0सी0 1 मिली0/ली0 पानी अथवा इमीडाक्लोप्रिड 200 एस0एल0 की 3 मिली0/8 ली0 पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

(य) धान का घासी रोग : इस रोग का वाहक धान का भूरा फुदका कीट होता है। इस कीट के शीशु तथा प्रौढ़ तने व पत्तियों का रस चूसते हैं और विषाणु को पौधों में छोड़ देते हैं। विषाणुओं

के प्रकोप से धान के पौधों की बढ़वार रूक जाती हैं। पौधा घास सरीखा दिखायी देता है। भोजन न मिलने से पौधे धीरे–धीरे पौधे सुख जाते हैं।

घासी रोग के लक्षण

प्रबंधन : टुंगरू विषाणु रोग प्रबंधन में उल्लिखित अनुसार करें।

(र) जड़ ग्रन्थि रोग : यह रोग निमेटोड के द्वारा होता है। इसके प्रकोप से धान की जड़ों में गॉठें बन जाती हैं, जिससे पौधों में भोजन ठीक ढंग से नहीं पहुॅच पाता है। पौधा छोटा रह जाता है। कल्लों की संख्या में कमी आ जाती है। धीरे–धीरे पौधा सूखने लगता है। अधिक प्रकोप होने पर धान का उत्पादन बहुत प्रभावित होता है।

जड़ ग्रन्थि रोग के लक्षण

प्रबंधन : इसके प्रबंधन हेतु खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करनी चाहिए। खेत में नीम की खली 2.5 क्विंटल/हे0 की दर से मिलाना चाहिए। रोग अवरोधी प्रजातियों का चयन करना चाहिए तथा फसल चक्र प्रक्रिया को अपनाना चाहिए। खेत की तैयारी के समय

कार्टपहाइड्रोक्लोराईड 4जी की 20 किग्रा0/हे0 अथवा कार्बोफ्यूरॉन 3जी 25 किग्रा0/हेक्टेयर की दर से रोपाई से पूर्व मिलाना चाहिए।

(ल) सफेद टिप रोग : यह रोग निमेटोड के द्वारा होता है। इसके प्रकोप से धान की पत्तियों के उपरी भाग (टिप) सफेद हो जाते हैं। कभी–कभी यह लक्षण पत्तियों के किनारे से प्रारम्भ होकर बीच की तरफ बढ़ते हैं। रोग की उग्रता बढ़ने पर धान की पैदावार प्रभावित होती है।

सफेद टिप रोग के लक्षण

प्रबंधन : जड़ ग्रन्थि रोग में उल्लिखित विधियों के अनुसार अपनाना चाहिए।

(3) दानों की बीमारियां:

(क) आभसी कंडः इस रोग के लक्षण बालियां निकलने के बाद उसके ऊपर स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ते हैं। रोगी बालियों के दाने पीले से लेकर संतरे रंग के बाद में जैतूनी हरे रंग के हो जाते हैं, रोगी धान के दाने दुगुने से बड़े हो जाते हैं। इस रोग के लक्षण खेत में कुछ ही स्थानों पर दिखायी पड़ते है। सामान्यतः धान की बाली में कुछ दाने ही रोगी होते हैं परन्तु रोग की आक्रमकता अधिक होने पर रोगग्रस्त दानों की संख्या अधिक भी हो सकती है।

आभसी कंड के लक्षण

प्रबंधन : खेत को साफ–सुथरा रखें, खरपतवारों तथा पूर्ववर्ती रोगग्रसित पौधों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। कल्ले निकलते समय कॉपर हाइड्राक्साईड 77 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 की 1 ग्राम

मात्रा/ली0 पानी की दर से तथा बालियॉ निकलने के समय प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई0सी0 की 1 मिली0/ली0 पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

(ख) बंट रोगः इस रोग में भी बालियां निकलने के बाद ही दानों के ऊपर काले रंग के धब्बे दिखायी देते हैं। रोगी बालियों के कुछ ही दाने इस रोग से प्रभावित होते हैं तथा दानों का कुछ ही भाग प्रभावित होता है। रोग की उग्रता बढ़ने पर सम्पूर्ण बालियां एवं दाने प्रभावित हो जाते हैं तथा अंगूठे और अंगुलियों के बीच में दानों को दबाने पर काले रंग का चूर्ण बाहर निकलता है जो जीवाणुओं का समूह होता है।

बंट रोग के लक्षण

प्रबंधन : रोग अवरोधी व सहनशील प्रजातियों का चयन करना चाहिए। बीज बोने से पहले बीजोपचार विटावैक्स पॉवर की 2 ग्राम मात्रा/किग्रा0 की दर से करना चाहिए। खेत में लक्षण दिखायी देने पर प्रभावित बालियों को सावधानीपूर्वक एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। इस रोग से प्रभावित खेत से अगले सत्र हेतु बीज का चयन नहीं करना चाहिए।